विदेशी निवेश की जरूरत नहीं

मीडिया के प्रकाशन और प्रसारण यानी उसकी व्यवस्था और प्रबंधन में विदेशी सहयोग बढ़ाया जाये, यह मन अब सरकार और प्रकाशकों का बनता जा रहा है। सामान्यत: यह सब स्वामित्व के सोच और समझ से जुड़ा हुआ है, हालांकि बातचीत और संदर्भ में कंटेटं यानी विषय वस्तु जैसा शब्द भी उपयोग में लाया जाता है। वस्तुत: वे प्रबंधक ही होते हैं फिर संगठन-संरचना में उसे किसी भी तरह से व्यक्त किया जाये। एफडीआई या प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की व्यवस्था तो पहले ही की जा चुकी है। इसकी सीमा 26 प्रतिशत तक थी। अब इसे 49 प्रतिशत किये जाने पर विचार हो रहा है। मनोरंजन और डीटीएच के मामलों में इसे 100 प्रतिशत भी किया जा सकता है। जागरण सहित कुछ समूह पहले से ही इसका लाभ ले रहे हैं।

भारत सरकार के आर्थिक मामलों के विभागीय सचिव अरविंद मायाराम के नेतृत्व में जो पेनल बहुत से विभागों और गतिविधियों के लिए प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की संभावना तलाशने के लिए गठित हुआ है उसे कई विभागों का मत मिल गया है। मीडिया और सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय का विचार अब तक नहीं मिला है। सूचना और प्रसारण मंत्री मनीष तिवारी ने कहा है कि बातचीत हो रही है और जल्दी ही इस बारे में निर्णय लिया जायेगा। उन्होंने तथा इस विभाग के अधिकारियों ने बताया है कि इस मामले में सूचना उद्योग विभाजित है। यह विभाजन केवल इसलिए नहीं है कि वे लोग विदेशी निवेश के विरोधी हैं, वरन इसलिए भी है कि वे कुछ कामों के लिए सौ प्रतिशत निवेश चाहते हैं। वे यह भी चाहते हैं कि मनोरंजन के लिए काम कर रहे एफ एम रेडियो तथा अन्य को समाचारों के प्रसारण की भी अनुमति दी जाये। कुछ लोग मीडिया को संवेदनशील मानते हुए इस सब मामले में सावधानी से काम करने का विचार व्यक्त कर रहे हैं और अमित पटेल जैसे मीडिया विश्लेषक उन कुछ लोगों में हैं जिन्होंने बहुत साफ कहा है कि ज्यादातर मीडिया हाउस को अब धन की सहायता या निवेश की दरकार नहीं है। उनकी आय काफी है। टाइम्स आफ इंडिया, डीबी कार्प आदि को उन्होंने इसी श्रेणी में गिना है। जागरण समूह और उनके विचारों से मेल खाने वाले मीडिया प्रमुख विदेशी निवेश को मीडिया की तरक्की के लिए जरूरी मानते हैं। वे मानते हैं कि यदि हमें विकसित देशों के मीडिया के साथ खड़ा होना है तो वर्तमान स्थिति को सुधारना होगा।

एक खतरा कुछ लोगों ने भांपा है। विदेशी निवेश के बाद नियंत्रण और हस्तक्षेप किसका रहेगा? कहने को तो सरकार और नियम कहते हैं कि 49 प्रतिशत निवेश के बाद भी व्यवस्था और सूचना-विचार सामग्री पर भारतीय पक्ष का ही नियंत्रण रहेगा। पर वे जानते हैं कि यह सब कहने की बात हैं। 26 प्रतिशत निवेश के बाद ही हस्तक्षेप रहा है, तब 49 प्रतिशत के बाद

हस्तक्षेप नहीं बढ़ेगा, यह समझ के परे है। अरविन्द मायाराम ने तो विश्व में आई आर्थिक मंदी का संदर्भ देते हुए विदेशी निवेश की संभावना तलाशना चाहा है। हालांकि सच तो यह है कि जिस तरह से अमरीका या यूरोप के देश इस मंदी से प्रभावित हुए थे, भारत में यह प्रभाव बहुत कम रहा था। फिर मंदी से उबरने के लिए बाजार की जरूरत ज्यादा जरूरी होती है और इस मायने में पश्चिम के लिए तो हम ही बाजार हैं। विकसित देश तो हमें बाजार की तरह ही देखते हैं। इस स्थिति को जानने समझने में संभवत: हमसे भूल हो रही है कि हमें यह अब अधिक आउट सोर्स का मजदूर बनायेगा या हम पश्चिम को अपना बाजार बना पायेंगे।

जिस तरह से पिछले दिनों मोबाइल और इंटरनेट का बाजार भारत और एशिया में विकसित हुआ है और इन माध्यमों का उपयोग अपने हितों और बाजार के रूप में किया गया है उससे यह साफ है कि मीडिया के दूसरे माध्यमों का उपयोग भी इसी तरह से किया जाना है। ऐसे में विदेशी निवेश का आशय अखबार तथा पत्रिकाओं के पाठकों को उपभोक्ता बनाना अधिक होगा, उनको जागरूक तथा समाज सरोकारी बनाना कम होगा। मनोरंजन उद्योग पहले से ही इस तरफ मुड़ चुका है, यह टी वी के चैनलों पर बिग बॉस, स्वयंवर या अन्य कार्यक्रमों के माध्यम से साफ है। ऐसे कार्यक्रम अब तेजी से बन रहे हैं जो मौजूदा समाज रचना को उपभोगी समाज के रूप में बदलने की प्रेरणा दे सकें। फेस बुक पर जिस तरह से अश्लीलता और कामनाओं के ज्वार पैदा किये जाने वाले ग्रुप बन रहे हैं और वे जिस तरह की सामग्री एक दूसरे के साथ साझा कर रहे हैं, वह सब इसी तरफ ले जाने का परिचायक है। यानी हम इस विदेशी निवेश के साथ अपने समाज को, अपनी समाज रचना और उसके सांस्कृतिक मूल्यों को विलोपित करते हुए उन मूल्यों और संस्कारों के साथ जोड़ना चाहते हैं जो समाज निरपेक्ष बनाने में मददगार होगें। मीडिया मुगल रूपर्ड मरडोक ने आस्ट्रेलिया या ब्रिटेन में जो किया वह यही सब तो था। वह तो वे लोग थे जिन्होंने उसकी इन छिपी आकांक्षाओं को पहचान कर उसे क्षमा याचना के लिए बाध्य किया और 150 साल पुराने उस अखबार को बंद करा दिया। क्या हम ऐसा कर पाये हैं या कर पायेंगे ?

यूरोप और अमरीका के समाचारपत्रों और टीवी माध्यमों ने अपने ही लोगों के साथ साझेदारी करते हुए और उनकी जरूरतों को पहचानकर अपना बाजार तैयार किया और लगातार सफलता प्राप्त की। ब्रिटेन, अमरीका, जर्मनी आदि देशों का नहीं जापान का मीडिया भी इसके उदाहरण हैं। रूस और चीन का जिक्र इसलिए नहीं किया कि यह कहा जा सकता है कि वह स्वतंत्र मीडिया नहीं है पर जिनका उल्लेख किया गया है वहां मीडिया ने अपने को व्यावसायिक रूप से विकसित किया है। ये सभी जानते हैं कि भारत में मीडिया-उपभोग की संभावनाएं इन सभी देशों की तुलना में अधिक हैं पर जाने क्यों भारत के प्रशासक और उनका नेतृत्व करने वाले लोगों में अपने लोगों की इस ताकत को पहचानने की समझ क्यों नहीं है ? या फिर हम दूसरी तरह के 'बनाना' गणतंत्र में तब्दील हो चुके हैं, जिसका नाम तो है पर जिसकी प्राण अन्यत्र गिरवी हैं। कम

से कम मीडिया के लोगों को तो इस तथ्य को जानना चाहिये और अपने को चौथी सत्ता के रूप में इन सब कवायदों से अलग रखकर विकास करना चाहिये। यह इसलिये कहा जा सकता है कि भारत के साठोत्तरी मीडिया व्यवसाय की छलांग व्यावसायिक सफलता का वह उदाहरण है, जिसकी वजह से ही विदेशी मीडिया व्यवसायी अब भारत की ओर आकर्षित हो रहे हैं।

० ० ०